International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)

E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

भारतीय संविधान के 75 वर्ष: विकास, उपलब्धियाँ एवं समकालीन चुनौतियाँ

डॉ. अमरनाथ पासवान

सह-आचार्य, सामाजिक समावेशन अध्ययन केंद्र, सामाजिक विज्ञान संकाय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी – 221005, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश:

26 नवंबर 1949 को, 'हम, भारत के लोगों' ने स्वतंत्र भारत के संविधान को 'अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित' करने का संकल्प लिया। आज भारत अपने संविधान के 75वीं वर्षगांठ पूरे जोरशोर से मनाने को तैयार है। भारतीय संविधान की जड़ें ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन में स्वतंत्रता के संघर्ष दौर से खोजी जा सकती हैं। नव संप्रभु राष्ट्र का मार्गदर्शन करने के लिए एक औपचारिक कानूनी ढांचे की आवश्यकता ने 1946 में गठित संविधान सभा को एक ऐसे संविधान का मसौदा तैयार करने का काम सौंपा, जो विविध आबादी की आकांक्षाओं को मूर्त रूप देता। विभिन्न अंतरराष्ट्रीय मॉडलों और भारत की सामाजिक–राजनीतिक वास्तविकताओं से प्रभावित होकर, विधानसभा ने व्यापक बहस और चर्चाएं कीं, जिसकी परिणति संविधान को अपनाने में हुई। 26 जनवरी, 1950 को अपनाया गया भारतीय संविधान, भारत में शासन, स्वतंत्रता, लोकतंत्र, न्याय, समानता, बंधुत्व और लोकतांत्रिक गणराज्य से लेकर समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष जैसे सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन इत्यादि की एक स्मारकीय यात्रा की आधारशिला बना हुआ है। भारतीय संविधान एक जीवित दस्तावेज है, जिसे अपनाए जाने के बाद से इसमें महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। यह अध्ययन आधुनिक भारत को आकार देने में संविधान के प्रमुख संशोधनों, न्यायिक निर्णयों की भारतीय सविधान की विकास यात्रा को व्यक्त करता है।

मुख्य बिंदु : भारतीय संविधान/75 साल, प्रजातंत्र, संवैधानिक संशोधन, संसदीय प्रणाली, संघीय संरचना, न्यायिक समीक्षा, बुनियादी संरचना सिद्धांत, समान नागरिक संहिता, मौलिक अधिकार, सामाजिक न्याय, धर्मनिरपेक्षता, आर्थिक समानता ।

भूमिका:–

भारतीय संविधान एक सामाजिक दस्तावेज है,(ऑस्टिन,1966) जो न केवल एक विविध राष्ट्र की आकांक्षाओं का प्रतीक है, बल्कि भारत गणराज्य को नियंत्रित करने वाले मौलिक कानून के रूप में भी कार्य करता है। जो न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे के मूल सिद्धांतों को बनाए रखते हुए देश के गतिशील सामाजिक–राजनीतिक परिदृश्य को दर्शाता है। संविधान को अक्सर देश के सर्वोच्च कानून के रूप में वर्णित किया जाता है, जो शासन और नागरिकों के अधिकारों के लिए रूपरेखा स्थापित करता है। यह अपनी व्यापक प्रकृति में अद्वितीय है, यह दुनिया का सबसे बड़ा लिखित एवं विस्तृत संविधान है। भारत के मूल संविधान में कुल 395 अनुच्छेद, 8 अनुसूचियां(वर्तमान में 12) तथा 22 भाग थे।(बसु, 2014) जैसा कि हम भारतीय संविधान की 75 साल की यात्रा का जश्न मना रहे हैं, इसकी उपलब्धियों और चुनौतियों पर विचार करना आवश्यक है। संविधान ने भारत की पहचान एक संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसने संसदीय

लोकतंत्र की स्थापना को सुविधाजनक बनाया है, कानून के शासन को कायम रखा है, और सामाजिक न्याय और समानता के लिए तंत्र प्रदान किया है। हालाँकि, यात्रा बाधाओं के बिना नहीं रही है, जिसमें संशोधनों पर बहस, केंद्र और राज्य सरकारों के बीच शक्ति संतुलन और मौलिक अधिकारों की सुरक्षा शामिल है।

इस शोध पत्र का उद्देश्य भारतीय संविधान के ऐतिहासिक संदर्भ, मूलभूत सिद्धांतों और महत्वपूर्ण संशोधनों के साथ–साथ पिछले सात दशकों में भारतीय समाज और शासन पर इसके प्रभाव का पता लगाना है। संविधान की व्याख्या और उसे आकार देने में न्यायपालिका की भूमिका का अवलोकन करना, ऐतिहासिक निर्णयों और संवैधानिक प्रावधानों की विकसित व्याख्या की जांच करके, यह अध्ययन भारत में लोकतंत्र और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने में संविधान की भूमिका की व्यापक समझ प्रदान करना चाहता है।

संविधान की विकास यात्राः–

प्रारंभिक वर्षों में राजनीतिक स्थिरता के निर्माण और 562 रियासतों को संघ में एकीकृत करने प्रशासनिक व्यवस्था और नीति कार्यान्वयन पर ध्यान केंद्रित किया गया। जिनमें से 559 देशी रियासतों ने स्वेक्षा से अपने रक्षा, विदेशी मामले और संचार व्यवस्था को अधीनस्थ कर भारत में विलय कर दिया था लेकिन जूनागढ़, हैदराबाद और जम्मूकश्मीर के विलय में कठिनाई हुई।(जेनिंग्स,1953) वर्तमान में भारत के राज्य क्षेत्र में राज्यों के राज्य क्षेत्र, भारत के संघ राज्य क्षेत्र और भारत द्वारा अर्जित क्षेत्र आते हैं। कालान्तर में संघ राज्य क्षेत्रों में 9वें संविधान संशोधन 1960 में बेरुवारी वाद को धारित करते हुए बेरुवारी और खुलना आदि खेत्रों को पाकिस्तान को दिया गया, गोवा की पुर्तगाल से मुक्ति के पश्चात् 12वें संविधान संशोधन 1962 में गोवा को भारत में संघ शासित प्रदेश के रूप में शामिल किया गया और, 100वें संविधान संशोधन अधिनियम 2015 द्वारा भारत और बांग्लादेश के मध्य 1974 में हस्ताक्षरित 'भू– सीमा समझौता' और तत्संबंधी प्रोटोकाल का अनुमोदन करते हुए कुछ भारतीय क्षेत्र बांग्लादेश को सौंपा गया (जोहरी,2021) जिससे सामरिक रूप से पड़ोसी देशों के साथ रणनीतिक सम्बन्ध मधुर बने रहे और अपनी संप्रभुता भी अच्छुण बनी रहे ।

संविधान एक प्रस्तावना से शुरू होता है, जो भारत को सम्पूर्ण प्रभुत्व संपन्न, लोकतंत्रात्मक,गणराज्य बनाने का संकल्प के साथ न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के मूलभूत मूल्यों, आदर्शों एवं आकांक्षाओं को रेखांकित करता है। केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973) में उच्चतम न्यायालय उद्देशिका को संविधान का भाग मानते हुए इसके मूल ढांचे के सम्बन्ध में मत दिया। जिसमें 42वें संविधान संशोधन अधिनियम 1976 द्वारा समाजवादी, पंथनिरपेक्ष और अखंडता शब्द जोड़े गये।(लक्ष्मीकांत,2017) जिसका उद्देश्य आर्थिक न्याय और सामाजिक सौहार्द्र को मजबूती देना था। भारतीय संविधान के भाग दो में एकल नागरिकता का प्रावधान है। और संसद को नागरिकता के सम्बन्ध में बिधि बनाने की शक्ति दी गयी है। जिसके तहत संसद द्वारा भारतीय नागरिकता अधिनियम 1955 पारित किया गया। इस अधिनियम में वर्ष 1986, 1992, 2003, 2005, 2015 और 2019 में संशोधन किया गया। नागरिकता संशोधन विधेयक,2016 पारित कर उन हिन्दू, बौद्ध, सिक्ख, जैन, पारसी, ईसाई नागरिकों को प्रकृतिकरण द्वारा भारतीय नागरिकता प्रदान करने की व्यवस्था की गई, वहीं नागरिकता (संशोधन) विधेयक,2019 में यह व्यवस्था की गई कि 31 दिसम्बर, 2014 या उसके पश्चात् अफगानिस्तान, बांग्लादेश और पाकिस्तान से भारत आये हुए हिन्दू, बौद्ध, सिक्ख, जैन, पारसी, ईसाई समुदाय के नागरिकों को अवैध प्रवासी नही माना जायेगा।(प्रभात,2023)

मौलिक अधिकारों एवं समाज कल्याण के विकास को बढ़ावा :–

मौलिक अधिकार व्यक्तिगत स्वतंत्रता की गारंटी देते हैं और नागरिकों को राज्य के उल्लंघन से बचाते हैं, कानून के समक्ष समानता सुनिश्चित करते हैं। भारतीय संविधान के भाग तीन में मूल अधिकार संबंधी प्रावधान किया गया है।

समता के अधिकार को अनु.17 को संविधान में अंतर्विष्ट किया गया था लेकिन आचरण और व्यवहार में सामाजिक समानता लाने हेतु अस्पृश्यता अपराध अधिनियम 1955 पारित कर अस्पृश्यता की पूर्णतः समाप्ति हेतु इसको दण्डनीय अपराध घोषित किया गया। सार्वजनिक जीवन की बढती जटिलताओं और आवश्यकताओं ने मौलिक अधिकारों में भी विभिन्न संशोधनों और न्यायालयों के निर्णयों द्वारा उतरोत्तर बृद्धि की जैसे अनु. 16 में समान कार्य के लिए समान वेतन का मौलिक अधिकार उच्चतम न्यायलय ने निगमित किया। अनु. 15(3) के आधार पर महिलाओं का घरेलु हिंसा से संरक्षण अधिनियम 2005 को संविधिक किया गया। अनु.21(क) को 86वें संविधान संशोधन अधिनियम 2002 द्वारा अन्तः स्थापित कर 'शिक्षा के अधिकार' को मौलिक अधिकार घोषित किया गया। बंधुआ मजदूर पुनर्वास योजना 2016 के द्वारा वह व्यक्ति जो ऋण को चुकाने के बदले ऋणदाता के लिए श्रम करता है जैसे सामंतवादी प्रथा को बंधुआ मजदूरी के रूप में चिन्हित किया, इत्यादि सुधार एवं सकारात्मक संसोधन किये जा रहे हैं।

राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों का उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक न्याय स्थापित करना और नीति—निर्माण में राज्य का मार्गदर्शन करना है। 4 नवम्बर, 1948 को संविधान सभा में बोलते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि 'किसी भी सरकार को इन निदेशक तत्त्वों का आदर करना होगा, वह इनकी उपेक्षा नही कर सकती। यदि कोई सरकार इनकी अवहेलना करेंगी तो उसे निर्वाचन के समय निर्वाचकों को उत्तर देना होगा।'(अम्बेडकर.1949) भारतीय संविधान के जीवनीकार कहे जाने वाले आस्टिन भारत के संविधान को एक सामाजिक दस्तावेज बताते हैं और मूल अधिकार और नीति निदेशक तत्व को संविधान की अंतरआत्मा कहते हैं। वर्तमान में अनुच्छेद 51क के अंतर्गत मौलिक कर्तव्यों की कुल संख्या 11 है। 42वें संविधान संशोधन 1976 द्वारा अनु. 39क समान न्याय और निशुल्क विधिक सहायता और अनु.48क पर्यावरण, वन तथा वन्यजीवों की रक्षा सुनिश्चित करने और न्याय से वंचित ना रह जाये इस बात का राज्य को प्रयत्न करना चाहिए जैसे दूरगामी हितकारी मुद्दों को भी उचित जगह देने का प्रयास किया गया।(लक्ष्मीकांत,2017) संविधान के कामकाज की समीक्षा करने के लिए राष्ट्रीय आयोग जिसे जेएमएनआर वेंकटचलैया आयोग के रूप में भी जाना जाता है, संविधान में संभावित संशोधनों का सुझाव देने के लिए फरवरी 2000 में अटल बिहारी वाजपेयी के राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के नेतृत्व वाली भारत सरकार के एक प्रस्ताव द्वारा की गई थी, जिसका नेतृत्व उच्चतम न्यायालय के एक सेवानिवृत्त मुख्य न्यायाधीश, न्यायमूर्ति वेंकटचलैया को सौंपा गाया था। विपक्षी दलों और विभिन्न अन्य संगठनों द्वारा आयोग का बहिष्कार किया गया था। इसके अतिरिक्त आयोग के गठन को लेकर कई राजनीतिक विवाद भी उत्पन्न हुए थे, हालांकि आयोग ने इन सबको दरकिनार करते हुए इसने 2002 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें 'राज्य के नीति निदेशक तत्व' शीर्षक की जगह 'राज्य की नीति के निदेशक तत्व एवं अनुयोजन' करने की अनुशंसा इत्यादि जैसी कई सिफारिशें की गई थी जिनको लगातार सरकारों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है।

संघीय और संसदीय व्यवस्था का विकास एवं नवाचारः—

संविधान केंद्र और राज्य सरकारों के बीच शक्तियों के स्पष्ट विभाजन के साथ एक संघीय ढाँचे की स्थापना करता है। 1947 के बाद, रियासतों को संघ में एकीकृत करने पर नए राज्यों का निर्माण और मौजूदा राज्यों का पुनर्गठन हुआ, जिससे केंद्र सरकार के अधीन शक्ति को मजबूत करके संघीय ढांचे पर असर पड़ा। 1956 के राज्य पुनर्गठन अधिनियम ने राज्यों को भाषाई आधार पर पुनर्गठित किया, जिससे अधिक प्रशासनिक दक्षता और सांस्कृतिक सामंजस्य को बढ़ावा मिला। इससे संघीय संबंधों की जटिलता बढ़ गई। संविधान में मूल रूप से शक्तियों के विभाजन का प्रावधान था, लेकिन विभिन्न संशोधनों और राजनीतिक विकासों के माध्यम से केंद्र सरकार के अधिकार का विस्तार हुआ। आपातकालीन प्रावधानः अनुच्छेद 352, 356 और 360 के तहत आपातकालीन प्रावधानों की शुरूआत ने केंद्र सरकार को राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान राज्यों पर अधिक नियंत्रण संभालने की अनुमति दी,

जिससे संघीय ढांचे को प्रभावी ढंग से कमजोर कर दिया गया। विभिन्न संशोधनों, विशेष रूप से 42वें संशोधन (1976) ने समवर्ती सूची में विषयों की सूची का विस्तार करके शक्ति को और अधिक केंद्रीकृत कर दिया, जिससे केंद्र सरकार को अधिक मुद्दों पर कानून बनाने की अनुमति मिल गई। अंतर–राज्य परिषद (1988) जैसी संस्थाओं की स्थापना का उद्देश्य केंद्र और राज्य सरकारों के बीच सहयोग और समन्वय को सुविधाजनक बनाना है, जो संघवाद की विकसित होती समझ को दर्शाता है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने केंद्र और राज्यों के बीच शक्तियों के वितरण की व्याख्या करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, अक्सर ऐतिहासिक निर्णयों में केंद्रीय प्राधिकरण का पक्ष लिया है।

भारत एक संसदीय लोकतंत्र को अपनाता है, जो लोगों के प्रति जवाबदेह एक जिम्मेदार सरकार सुनिश्चित करती है। संविधान के भाग 5 के अनु. 79 में कहा गया है, 'संघ के लिय एक संसद होगी जो राष्ट्रपति और दोनों सदनों से मिलकर बनेगी।' संविधान निर्माताओं ने संविधान में 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' शब्द का प्रयोग किया है क्योंकि वे संसद को ज्यादा शक्ति देना चाहते थे। ऑस्टिन जहाँ विधायिका की समन्वयकारी भूमिका की बात करते हैं वही कार्यपालिका को लोकतंत्र की शक्ति बताते हैं। जिसमें कार्यपालिका अपनी नीतियों एवं कार्यों के लिए विधायिका के प्रति उत्तरदायी होती है।(ऑस्टिन,2003) लोकसभा को राज्यसभा के साथ मिलकर संविधान के किसी भी उपबंध का परिवर्द्धन, परिवर्तन या निरसन के रूप में संशोधन का अधिकार प्राप्त है संविधान निर्माताओं ने संविधान में 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' शब्द का प्रयोग किया है क्योंकि वे संसद को ज्यादा शक्ति देना चाहते थे। ऑस्टिन जहाँ विधायिका की समन्वयकारी भूमिका की बात करते हैं वही कार्यपालिका को लोकतंत्र की शक्ति बताते हैं। जिसमें कार्यपालिका अपनी नीतियों एवं कार्यों के लिए विधायिका के प्रति उत्तरदायी होती है। वे न्यायपालिका को सामाजिक क्रांति की वाहक मानते हैं। संविधान निर्माता न्यायपालिका को अत्यधिक स्वायत्तता व स्वतंत्रता देना चाहते थे इसीलिए संविधान में न्यायधीशों की नियुक्ति का अधिकार राष्ट्रपति को दिया। शून्यकाल भारतीय संसदीय परम्परा की विशिष्ट देन है। यह 1962 से जारी है जो प्रश्नकाल के तुरंत बाद 12 से 1 बजे के बीच होता है। इसमें प्रश्नकाल के विपरीत बिना पूर्व सूचना के मामला उठा सकते हैं, ऐसे प्रश्न अत्यधिक महत्वपूर्ण विषयों पर सदन का ध्यान आकर्षित करने हेतु पूछे जाते है। पिछले कुछ वर्षों में बदलती सामाजिक–राजनीतिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये संविधान में कई बार संशोधन किए गए हैं। महत्त्वपूर्ण संशोधनों में 26वाँ संविधान संशोधन 1971 में माधव राव सिंधिया बनाम भारत संघ (प्रिवी पर्स मामले) में उच्चतम न्यायलय द्वारा दिए गये निर्णय की कठिनाइयों को दूर करने के लिए पारित किया गया था। जिसमे न्यायलय ने भूतपूर्व राजाओं के विशेषाधिकारों को समाप्त करने वाले राष्ट्रपति के अध्यादेश को असंवैधानिक घोषित कर दिया था। इस संशोधन के द्वारा संविधान से अनु.291 और 362 को निकाल दिया गया जो इन विषयों से संबंधित थे और एक नये अनु.363(क) जोड़कर भूतपूर्व राजाओं के प्रीविपर्स तथा विशेषाधिकारों को समाप्त किया गया। 42वाँ संविधान संशोधन,1976 जिसका उद्देश्य सत्ता का केंद्रीकरण करना था, 44वाँ संविधान संशोधन,1978 जो 42वें संविधान संशोधन की कुछ धाराओं को निरस्त करता है और 73वाँ और 74वाँ संशोधन, 1992 जिसने स्थानीय स्वशासन को बढ़ाया इत्यादि शामिल हैं। संसद ने जनप्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 पास कर संसद सदस्यों की अहर्ताएँ निर्धारित की हैं। गुजरात में हुई घटनाओं के परिणामस्वरूप 33वाँ संविधान संशोधन 1974 के तहत संसद एवं विधानसभा सदस्यों द्वारा दबाव में या जबरदस्ती किये जाने पर इस्तीफा देना अवैध घोषित किया गया एवं अध्यक्ष को यह अधिकार प्रदान किया गया कि वह सिर्फ स्वेक्षा से दिय गये एवं उचित त्यागपत्र को ही स्वीकार करे। इसके अतिरिक्त पद के दुरूपयोग के रोकथाम के लिए 52वें संविधान संशोधन 1985 जिससे 10वीं अनुसूची को संविधान में शामिल किया गया तथा 91वां संविधान संशोधन 2003 दल बदल से संबंधित है। जिसके द्वारा जहां मंत्रिपरिषदों का आकार निश्चित किया गया वही 10वीं अनुसूची से यह भी हटा दिया गया कि किसी दल में 1/3 सदस्यों की टूट अयोग्यता नहीं है, अर्थात अब ऐसी कोई छूट नही है। अब 2/3 सदस्यों को ऐसा करना होगा।

सबसे पहले पागे समिति ने यह अनुशंसा की कि मान्यता प्राप्त सबसे बड़े विपक्षी दल(चाहे वह नियमित दल हो) अथवा वह विभिन्न दलों अथवा ग्रुपों से बना हुआ दल हो, के नेता को विपक्षी दल के नेता के रूप में मान्यता दी जानी चाहिए। हालाँकि 1969 में ही संसद के दोनों सदनों में नेता प्रति पक्ष को मान्यता मिली लेकिन 1977 में जब केंद्र में प्रथम गैर–कांग्रेसी सरकार बनी जनता पार्टी की तथा प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई बने तब 'विपक्ष का नेता' का पद वैधानिक बनाया गया। उसे 'कैबिनेट मंत्री' के समान वेतन भत्ते व प्रोटोकाल दिया गया। जिसके लिए 1/10 से ज्यादा सीटें अर्थात लोकसभा में कम से कम 55 और राज्य सभा में नेता प्रतिपक्ष के लिए 25 सदस्य होने चाहिए। 10 प्रतिशत का प्रावधान विधि के तहत न होकर लोकसभा अध्यक्ष के 'निर्देश संख्या 121' के अंतर्गत उल्लिखित है।(भार्गव 2009) अमेरिका में विपक्ष के नेता को 'अल्प संख्यक नेता' ब्रिटेन में 'छाया मंत्रिमंडल' के कारण आइवर जेनिंग्स ने इसे 'वैकल्पिक प्रधानमंत्री' कहा जाता है।

संवैधानिक व्याख्या में न्यायपालिका की भूमिकाः–

भारत में शासन प्रणाली संघीय है किन्तु न्यायपालिका एकीकृत है। ऑस्टिन न्यायपालिका को सामाजिक क्रांति की वाहक मानते हैं।(ऑस्टिन,2003) संविधान निर्माता न्यायपालिका को अत्यधिक स्वायत्तता व स्वतंत्रता देना चाहते थे इसीलिए संविधान में न्यायधीशों की नियुक्ति का अधिकार राष्ट्रपति को दिया। भारतीय न्यायपालिका के प्रारंभिक वर्षों के तीन प्रमुख पहलू सामने आते हैंः पहला, यह संवैधानिक पाठ का पालन करता था। दूसरा, इसने सरकार की विचारधाराओं (समाजवाद, सकारात्मक कार्रवाई यथा आरक्षण नीति) से प्रभावित होने से इनकार कर दिया। तीसरा, संविधान में संशोधन करने की पूर्ण शक्ति रखने की विधायी विवेकशीलता को सही दृष्टिकोण माना गया।(देशपांडे,2013) इस प्रकार, हालांकि न्यायपालिका ने कामेश्वर प्रसाद मामले में जमींदारी उन्मूलन को अवैध और संपत्ति के अधिकार का उल्लंघन घोषित किया, लेकिन जब संसद ने प्रावधान को बाहर रखने के लिए संविधान में पहला संशोधन पारित किया तो उसने न्यायिक समीक्षा के प्रावधान का उपयोग करने से परहेज किया। इसी तरह, चंपकम दोराईराजन वाद में, अदालत ने संसद के साथ संस्थागत टकराव से बचते हुए, जाति के आधार पर शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण देने के केंद्र सरकार के फैसले को समानता के अधिकार (अनुच्छेद 14 के तहत) के उल्लंघन के रूप में खारिज कर दिया। इन सभी मामलों में, न्यायपालिका ने संविधान की सकारात्मक व्याख्या का पालन किया। दूसरा चरण, जो राजनीतिक रूप से उथल–पुथल भरा रहा उसकी शुरुआत गोलक नाथ फैसले के साथ हुआय यहां न्यायपालिका ने मौलिक अधिकारों की व्यापक व्याख्या के साथ राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश किया। सुप्रीम कोर्ट ने 17वें संशोधन की संवैधानिकता पर पुनर्विचार किया और बहुमत से फैसले में उक्त संशोधन को अवैध घोषित कर दिया। अदालत ने फैसला सुनाया कि संसद की संशोधन शक्ति मौलिक अधिकारों के परीक्षण के अधीन थी। संक्षेप में, सुप्रीम कोर्ट ने संसद को उसकी विधायी संप्रभुता से वंचित कर दिया और संपत्ति के अधिकार से संबंधित मामलों पर भी न्यायिक समीक्षा की अपनी शक्ति बहाल कर दी। इसने न्यायपालिका और संसद के बीच टकराव का मंच तैयार कर दिया। अपनी सर्वोच्चता पुनः स्थापित करने के लिए संसद ने 24वाँ संशोधन पारित किया जिसने गोलक नाथ को पलट दिया। संसद के इस संशोधन ने अदालत को ऐतिहासिक केशवानंद भारती निर्णय देने के लिए प्रेरित किया जिसने संविधान में संशोधन करने के लिए संसद की संप्रभु शक्ति पर प्रतिबंध लगा दिया। सुप्रीम कोर्ट की 13 जजों वाली संवैधानिक पीठ ने बहुमत के फैसले (7 जजों ने समर्थन किया) में फैसला सुनाया कि हालांकि संसद अनुच्छेद 368 के तहत संविधान में संशोधन करने के लिए सर्वोच्च है, लेकिन वह संविधान की 'बुनियादी संरचना' को नहीं बदल सकती है। राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान हुए नुकसान की भरपाई के लिए, मेनका गांधी बनाम भारत संघ मामले में अदालत और उसके बाद के फैसलों ने 'जीवन के अधिकार' को व्यापक अर्थ देने के लिए अनुच्छेद 21 का दायरा बढ़ा दिया। उसने यह निर्धारित किया कि अनुच्छेद 21 अपने भीतर ऐसे सभी कार्यों को शामिल करता है जो जीवन को सार्थक बनाते हैं। इस प्रकार, धीरे–धीरे, न्यायपालिका ने रचनात्मक रूप से जनहित याचिका (पीआईएल) का उपयोग करके मौलिक अधिकारों की व्यापक व्याख्या के माध्यम से न्यायिक सक्रियता के युग का निर्माण किया। पीआईएल क्रांति का शुरुआती ऐतिहासिक एस.पी. गुप्ता बनाम भारत के

राष्ट्रपति और अन्य के साथ का फैसला सुनाते हुए जस्टिस पी.एन. भगवती ने कहा कि ''सार्वजनिक कार्य करने वाला कोई भी सदस्य और सार्वजनिक गलती या सार्वजनिक चोट के निवारण के लिए कार्रवाई शुरू करने में पर्याप्त रुचि रखने वाला कोई भी सदस्य अदालत का रुख कर सकता है''। न्यायालय द्वारा जनहित याचिका को सक्रिय रूप से बढ़ावा देने से कई सार्वजनिक–उत्साही व्यक्तियों, वकीलों और गैर सरकारी संगठनों को मानवाधिकारों के उल्लंघन, महिलाओं के अधिकारों, बाल अधिकारों, बंधुआ मजदूरी, पर्यावरण प्रदूषण और यहां तक कि संवैधानिक और शासन से संबंधित सभी प्रकार के मुद्दों पर मुकदमे दायर करने के लिए प्रोत्साहित किया गया। जनहित याचिका के माध्यम से, न्यायालय ने मानवीय गरिमा के साथ जीने का अधिकार, आजीविका का अधिकार और स्वस्थ वातावरण के अधिकार जैसे अंतर्निहित अधिकारों को कवर करने के लिए मूल अधिकारों (यानी, मौलिक अधिकार, विशेष रूप से अनुच्छेद 21) का रचनात्मक रूप से विस्तार किया। हाल ही में, सर्वोच्च न्यायलय और उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्ति तथा स्थानांतरण के लिए 1993 से चली आ रही कालेजियम प्रणाली के स्थान पर 99वां संविधान संशोधन 2014 के द्वारा नए राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग की स्थापना का प्रावधान किया था। किन्तु 14 अक्टूबर, 2015 को न्यायमूर्ति जे एस केहर की अध्यक्षता वाली पांच सदस्यीय संविधान पीठ ने 4:1 के बहुमत से 'राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग' अधिनियम और 99वें संविधान संशोधन को रद्द कर कालेजियम प्रणाली को पुनः बहाल कर दिया।(बसु,2013)

स्थानीय लोकतांत्रिक संस्थाओं के संवैधानिकरण के प्रयासः–

ग्रामीण विकास में जनसहभागिता बढ़ने के लिए 2 अक्टूबर, 1952 को के.एम. मुंशी समिति की सिफारिश पर 'सामुदायिक विकास कार्यक्रम' लागू किया गया 1953 में राष्ट्रिय सविस्तार योजना लागू की गई। इस कार्यक्रम के लिए लिय अमेरिका के फोर्ड फाउंडेशन ने आर्थिक सहायता दी। 1957 में 'सामुदायिक विकास कार्यक्रम' की समीक्षा के लिए बलवंत राय मेहता की अध्यक्षता में 'ग्रामोद्धार समिति' गठित की गयी। 1957 में ही इस कमेटी 'लोकतान्त्रिक विकेंद्रीकरण' नाम से अपनी रिपोर्ट सौंप दी जिसने इन कार्यक्रमों में अत्यधिक प्रशासनिक हस्तक्षेप तथा जनसहभागिता के अभाव को इनकी असफलता का कारण बताया।(भट्टाचार्या,2017) योजना आयोग द्वारा गठित जी वी के राव समिति, 1985 ने पंचायती राज में नौकरशाही के हावी होने से पंचायती राज संस्थाओं को 'बिना जड़ वाली घास' कहा। एल एम सिंघवी समिति व पी के थुंगन समिति की सिफारिशों के उपरांत राजीव गाँधी की सरकार ने पंचायतों को संवैधानिक मान्यता देने हेतु जुलाई 1989 में 64वां संविधान संशोधन विधेयक लोकसभा में प्रस्तुत किया जो की राज्य सूची के विषय पर संघीय व्यवस्था में केंद्र के बढ़ते दखल के मुद्दे पर यह राज्य सभा में पारित नही हो पाया। फिर 1992 में प्रधानमंत्री नरसिम्हा राव की सरकार ने 73वां संविधान संशोधन कर पंचायतों को संवैधानिक दर्जा दिया और यह 24 अप्रैल, 1993 से प्रभाव में आया। भारत में स्थानीय शासन महत्वपूर्ण रूप से 73वें और 74वें संविधान संशोधन द्वारा विकेंद्रीकरण को बढ़ावा देने और जमीनी स्तर पर लोकतंत्र को मजबूत करने से हैं। 73वां और 74वां संशोधन (1992) ये संशोधन ऐतिहासिक परिवर्तन थे, जिन्होंने क्रमशः ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में स्थानीय शासन को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया। 73वां संशोधनः ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायती राज संस्थाओं पर ध्यान केंद्रित करते हुए त्रिस्तरीय प्रणाली (ग्राम पंचायत, पंचायत समिति और जिला परिषद) की स्थापना सुनिश्चित की गई। जिसको बलवंत राय मेहता समिति ने लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की व्यवस्था कहा। 74वां संशोधनः शहरी स्थानीय निकायों से संबंधित है, नगर पालिकाओं और नगर निगमों के लिए प्रावधान करता है, और शहरी स्थानीय शासन की संरचना, संरचना और शक्तियों का विवरण देता है। संशोधनों का उद्देश्य राज्य और केंद्र सरकारों से सत्ता का विकेंद्रीकरण करके, जमीनी स्तर पर लोकतंत्र को बढ़ावा देना और शासन में स्थानीय भागीदारी सुनिश्चित करके स्थानीय स्वशासन को सशक्त बनाना है। ग्यारहवीं अनुसूची में 29 विषयों का उल्लेख किया गया जिसमें पंचायतों को विधि बनाने की शक्ति भी प्रदान की गई। 1994 में अनुसूचित क्षेत्रों में पंचायती राज लागू करने हेतु दलीप सिंह भूरिया समिति का गठन किया गया। जिसकी सिफारिश पर 'पंचायती राज अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार अधिनियम' 1996 में बनाया गया। इन संशोधनों ने स्थानीय निकायों के लिए नियमित

चुनाव को अनिवार्य कर दिया, जिससे लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व में वृद्धि हुई। सीटें अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और महिलाओं (कुल सीटों का कम से कम एक तिहाई) के लिए आरक्षित हैं।(लक्ष्मीकांत,2017) स्थानीय निकायों को सामाजिक कल्याण योजनाओं के कार्यान्वयन, सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा, बुनियादी ढांचे के विकास और स्वच्छता सहित विभिन्न जिम्मेदारियां सौंपी गईं। स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए आरक्षण के प्रावधान ने शासन में उनकी भागीदारी में उल्लेखनीय वृद्धि की है, जिससे अधिक समावेशी निर्णय लेने में योगदान मिला है। स्थानीय निकायों में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने के लिए अनु. 243झ के तहत राज्य चुनाव आयोग की स्थापना जमीनी स्तर पर लोकतंत्र को मजबूत करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम रहा है। संवैधानिक ढांचे के बावजूद, राजनीतिक हस्तक्षेप, अपर्याप्त वित्तीय संसाधन और स्थानीय स्तर पर क्षमता निर्माण की आवश्यकता जैसी चुनौतियाँ बनी हुई हैं। चल रहे सुधारों का उद्देश्य स्थानीय शासन की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए इन मुद्दों का समाधान करना है।

भाषाई विविधता को पहचानः–

संविधान में अनु. 343 के तहत राजभाषा संबंधी प्रावधान दिया गया है। संविधान के मूल पाठ में 8 वीं अनुसूची के तहत 14 भाषाओं को रखा गया था। वर्तमान में संविधान द्वारा मन्यता प्राप्त प्रादेशिक भाषाओं की कुल संख्या 22 है। 21वें संविधान संशोधन अधिनियम 1967 द्वारा सिन्धी को, 71वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 द्वारा नेपाली, कोंकणी तथा मणिपुरी को तथा 92वें संविधान संशोधन अधिनियम 2003 के द्वारा बोडो, डोगरी, मैथिली तथा संथाली को 8वीं अनुसूची में शामिल किया गया। ज्ञातव्य है की संविधान लागू होने की तिथि से हिंदी को राजभाषा का दर्जा तो दिया गया किन्तु उसे लागू नही किया जा सका था। संसद ने राजभाषा अधिनियम 1963 को पारित कर 26जनवरी,1965 से यह प्रावधान किया की हिंदी संघ की राजभाषा तो रहेगी किन्तु हिंदी के अतिरिक्त अंग्रेजी भी संघ के सभी सरकारी प्रयोजनों के लिए बराबर प्रयुक्त होती रहेगी।(भार्गव,2009) इसके अतिरिक्त 7 वें संविधान संशोधन अधिनियम 1956 के द्वारा अनु. 350क के तहत राज्य भाषायी अल्पसंख्यक–वर्गों के बालकों को प्राथमिक स्तर पर मार्तभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधा उपलब्ध करने का प्रयास करेगा।

सकारात्मक कार्यवाही के तहत आरक्षण का विकासः–

लोकतान्त्रिक सिद्धांतों पर आधारित किसी भी राज्य का प्राथमिक दायित्व विषमता को कम करना होता है। भारतीय संविधान में सकारात्मक कार्रवाई के तहत आरक्षण का विकास सामाजिक न्याय और समानता को बढ़ावा देने का एक महत्वपूर्ण पहलू है। इसी सकारात्मक कार्यवाही को जे राल्स ने भेदमूलक न्याय की अवधारणा प्रकट करता है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 14 के तहत विधि के समक्ष समानता, अनुच्छेद 15 में धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, या जन्मस्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध, अनुच्छेद 16 रोजगार में अवसर की समानता पर केंद्रित है, जो गैर–भेदभाव के सिद्धांत (अनुच्छेद 16(1)) और सकारात्मक कार्रवाई (अनुच्छेद 16(4)) के बीच एक जटिल संतुलन प्रस्तुत करता है। सार्वजनिक रोजगार में आरक्षण की अवधारणा अनुच्छेद 16(4) के माध्यम से पेश की गई थी, जिसका उद्देश्य ऐतिहासिक अन्याय और सामाजिक असमानताओं को सुधारना था। इस अनुच्छेद के तहत सकारात्मक कार्रवाई केवल भेदभाव को रोकने के बारे में नहीं है। यह विभिन्न समूहों के लिए सक्रिय रूप से परिणामों को बराबर करने के बारे में है, विशेष रूप से उन लोगों के लिए जो ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर रहे हैं। भारत में आरक्षण नीति की यात्रा गतिशील रही है, जिसे संवैधानिक संशोधनों और न्यायिक व्याख्याओं ने आकार दिया है। इंदिरा साहनी फैसले के बाद अनुच्छेद 16(4ए) और (4बी) की शुरूआत और उसके बाद एम.नागराज बनाम भारत संघ जैसे फैसले भारत में सकारात्मक कार्रवाई की विकसित प्रकृति को दर्शाते हैं। इसके अतिरिक्त संविधान के भाग 16 के अनु.330 से 342क के तहत कुछ वर्गों के सम्बन्ध में लोकसभा और विधानसभा में विशिष्ट प्रावधान किये गये हैं। इन संशोधनों और निर्णयों ने पदोन्नति में आरक्षण की जटिलताओं, परिणामी वरिष्ठता की अवधारणा और विवादास्पद कैरी–फॉरवर्ड नियम को संबोधित करने का प्रयास किया है।(देशपांडे,2013) मूल रूप से, संविधान

केवल अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को आरक्षण देता था, लेकिन क्रमशः 93वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2005 और 103वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2019 के माध्यम से सामाजिक और शैक्षिक रूप से वंचित वर्गों के साथ–साथ आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों को आरक्षण प्रणाली के तहत शामिल किया गया था। भारत में 'आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग (ईडब्ल्यूएस)' आरक्षण की शुरूआत ने इन नीतियों के बीच अंतर का एक और महत्वपूर्ण बिंदु पैदा किया। जबकि भारतीय आरक्षण प्रणाली किसी व्यक्ति की वित्तीय स्थिति के आधार पर 10 प्रतिशत आरक्षण निर्धारित करती है, अमेरिका में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है। ईडब्ल्यूएस कोटा अनुच्छेद 15 व 16 में संशोधन करके क्रमशः दोनों में ही नए खण्ड 6 अंतः स्थापित करके आर्थिक रूप से वंचित व्यक्तियों को आरक्षण प्रदान करता है जो पहले से ही आरक्षण की किसी अन्य श्रेणी के अंतर्गत नहीं आते हैं।(प्रसन्ना, 2023) भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने हाल ही में जनहित अभियान बनाम भारत संघ मामले में एक फैसला सुनाया, जिसमें 103वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2019 को बरकरार रखा गया, जिससे राज्य द्वारा संचालित शैक्षणिक संस्थानों और राज्य प्रायोजित रोजगार कार्यक्रमों में आय–आधारित सकारात्मक कार्रवाई या संरक्षणमूलक भेदभाव के लिए एक व्यवस्था बनाई गई। नीरा चंडोक आरक्षण से जुड़े मिथकों का विश्लेषण करती हैं जिनमे प्रमुख है कि, आरक्षण से समानता के सिद्धांत का उल्लंघन होता है। और आरक्षण की व्यावहारिक समस्या ये है कि आरक्षण विविधता के प्रति सम्मान की भावना से नही किया जाता जिस आधार पर लोगों को एक दुसरे के प्रति असहिष्णु बना देता है,इत्यादि।(चंडोक,2006) जबकि इसको तर्कसंगत आधार पर स्वीकार किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

भारतीय संविधान की 75 वर्षों की यात्रा एक नवजात लोकतंत्र से एक अनुकूल और जीवंत गणराज्य के रूप में देश के विकास को दर्शाती है, जो लगातार अपने लोगों और उनकी आकांक्षाओं द्वारा आकार ले रही है। भारतीय संविधान एक गतिशील दस्तावेज रहा है जो देश की बदलती जरूरतों को पूरा करने के लिए वर्षों से विकसित हुआ है। इसने महत्वपूर्ण राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों के बीच शासन के लिए एक स्थिर ढांचा प्रदान किया है। तकनीकी प्रगति के दौर में डिजिटल युग शासन, पारदर्शिता और नागरिक सहभागिता के लिए नई चुनौतियाँ और अवसर लेकर आया है। डिजिटल प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया के उदय ने शासन और संवैधानिक प्रथाओं को प्रभावित किया है। गोपनीयता, डेटा सुरक्षा और साइबर कानून से संबंधित मुद्दे महत्वपूर्ण चुनौतियों के रूप में उभरे हैं। संशोधन और न्यायिक फैसले, व्यक्तिगत गोपनीयता, चुनाव सुधार और पर्यावरण संबंधी चिंताओं सहित समसामयिक मुद्दों को संबोधित करना जारी रखते हैं। उदाहरण के लिए, शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, 2013 और नागरिकता संशोधन अधिनियम, 2019 जैसे हालिया संशोधनों का लोक कल्याण और नागरिकता कानूनों पर गहरा प्रभाव पड़ा है। संविधान अधिकारों और न्याय की वकालत करने वाले विभिन्न सामाजिक आंदोलनों के लिए आधारशिला रहा है, जो इसकी गतिशील और विकासशील प्रकृति को दर्शाता है। जैसे कि पर्यावरणीय आंदोलनों में चिपको आन्दोलन 1973, नर्मदा बचाओ आन्दोलन 1985 सरदार सरोवर बाँध के विरोध में, खनन विरोधी– तूतीकोरन में स्टरलाइट इंडस्ट्री का विरोध तमिलनाडु में, उड़ीसा में वेदांत की बालको परियोजना का विरोध। अगस्त,2011 को संसद द्वारा पारित लोकपाल विधेयक एवं भारतीय कृषि अधिनियम,2020 जिसे अक्सर कृषि विधेयक भी कहा जाता है, का विरोध एवं अन्य नृजातीय आन्दोलन इत्यादि। निरंतर सामाजिक–आर्थिक असमानताओं से निपटना और समावेशी विकास सुनिश्चित करना, देश की एकता और प्रगति को बनाए रखने के लिए लोकतंत्र, न्याय और समानता के सिद्धांतों को केंद्रीय बनाए रखना महत्वपूर्ण होगा। जैसे–जैसे भारत का विकास जारी है, संविधान इसके लोकतांत्रिक लोकाचार के केंद्र में रहेगा और उभरती चुनौतियों और अवसरों के माध्यम से देश का मार्गदर्शन करेगा।

References:-

1. Ambedkar, B. R. (1946). *Constituent assembly debates: Official report*. Lok Sabha Secretariat.

2. Austin, G. (1966). *The Indian Constitution cornerstone of a nation Granville Austin.* Oxford University Press.
3. Austin, G. (2003). *Working a democratic constitution: A history of the Indian experience.* Oxford University Press.
4. Paswan, A. (2016). *Samkalin Bharat: Samajik, Arthik evam Rajnitik Vimarsh, VictoriousPublishers New Delhi*. PP-1–338.
5. Basu, D. D. (2014). *Commentary on the constitution of India*. LexisNexis.
6. Bhattacharya, S. (2017). *The Constitution of India: A Critical Analysis*. Routledge.
7. Bhargava, R. (2009). *Politics and ethics of the Indian constitution*.
8. Chakrabarty, B. (2008). *Indian politics and society since independence : events, processes and ideology*. Routledge.
9. Chandhoke,N. (2006). *Three Myths about Reservations*. Economic and Political Weekly, DOI:10.2307/4418313
10. Deshpande, A. (2013). *Affirmative action in India.* Oxford University Press.
11. Dhamija, A. (2007). Need *to Amend a Constitution and Doctrine of Basic Features*. Wadhwa and Company.
12. Fadia, B.L. (2004). *Indian Govt. and Politics.* New Delhi
13. Golden Jubilee of the Republic of India. (2001).
14. Ghai, K.K. (2009). *Indian Polity*. Kalyani Publishers, New Delhi
15. Grover, B.L.,Mehta, A. (2012). *A new look at Modern Indian History.* S.Chand Publishers, New Delhi
16. *Introduction to Constitution of India.* Ministry of Law and Justice of India. 29 July 2008.
17. Jayal N, G. & Mehta P,B. (2010). *The Oxford Companion to Politics in India.* Oxford University Press, USA.
18. Jennings,S.I (1953). *Some Characteristics of the Indian Constitution.*
19. Johari,J.C. (2021). *Bhartiya Samvidhan (Indian Constitution) According to the National Education Policy-2020 New Syllabus.* SBPD Publications.
20. *Making of Constitution*, Lok Sabha Secretariat, 2016
21. Pal, S., & Kashyap, A. K. BUDDHISM IN THE PRESENT DIGITAL ERA., SHODH SARITA AN INTERNATIONAL BILINGUAL PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL, Vol. 7, Issue 25 (III), January-March, 2020 Page Nos. 148-152
22. Mishra,P & Kashyap,A K, The Impact of Self Help Group on Decision Making Power Among Rural Women, Journal of Socio-Educational & Cultural Research International Journal of Arts & Social Sciences Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India Vol.12, N. 24, March 2026 DOI: 10.13140/RG.2.2.13106.57283
23. Prasanna, S. (2023). *A Landmark On The Indian Constitution.* Institute of Legal Education.
24. Team, P. (2023). *Bharat Ka Samvidhan Bare Act.* Prabhat Prakashan.
25. Hasan, Z. (2005). *India's living constitution : ideas, practices, controversies.* Anthem Press.
26. *50th Anniversary of The Republic of India, Select Proceedings of the Constituent Assembly relating to the Adoption and Signing of the Constitution*, Lok Sabha Secretariat, 2000.

27. अग्रवाल, पी के. (2020). *भारत का संविधान.* प्रभात प्रकाशन, दिल्ली.

28. काश्यप, एस सी. (2020). *हमारा संविधान भारत का संविधान और संवैधानिक विधि.* नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया.

29. काश्यप, एस सी. (2016). *हमारी संसद.* नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया.

30ण बसु,दुर्गा दास. (2017).*भारतीय संविधान एक परिचय,* लेक्सिसनेक्सिस.
31ण लक्ष्मीकांत, एम. (2017).*भारत की राजव्यवस्था.* मक्ग्रा हिल एजुकेशन प्राइवेट लिमिटेड.
32ण शर्मा, अरुण कुमार. (1995).*भारत में स्थानीय शासन.*
33ण शुक्ला, वी एन. (2023).*भारत का संविधान,* 14वां संस्करण. ईस्टर्न बुक कंपनी.